भगवान् शिव एवं रामकृष्ण परमहंस

पिछले सवासौ सालों के महान् संतों में अग्रणी रामकृष्ण परमहंस कलकत्ते के दक्षिणेश्वर में रानी रासमणि द्वारा बनवाये गये काली मंदिर के पुजारी थे। उनके स्वामी विवेकानन्द जैसे विद्वान् एवं सतोगुण-सम्पन्न शिष्य ने 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना की थी। परमहंसजी माँ काली के अनन्य भक्त थे तथा उन्हें माँ का दर्शन बराबर होता रहता था। वे भगवान् शिव के बारे में कहते हैं कि वे योग के प्रत्यक्ष अवतार हैं। वे ध्यानद्वारा जीवात्मा और परमात्मा का मेल करा देनेवाली एक मूर्तिमान् शक्ति हैं। वे ध्याननिष्ठ पुरुषों के आदर्श हैं, क्योंकि वे नित्यप्रति समाधि लगाकर परब्रह्म के ऐश्वर्य का चिन्तन करते रहते हैं। संसार की उन्हें कुछ भी परवाह नहीं है; सुख-दुःखादि द्वन्द्वों के अतीत होकर परमात्मस्वरूप के साथ तादात्म्य का अनुभव करते हुए सदा शान्त, स्थिर और अचल रहते हैं।

परमात्म-स्वरूप में लीन शिवजी के गले में संसार के सर्प लिपटे रहते हैं; परन्तु वे उन्हें डस नहीं सकते। मृत्यु का उग्र रूप प्रदर्शित करनेवाले नरमुण्डादि भयप्रद पदार्थ उनके चारों ओर फैले रहते हैं परन्तु उन पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं होता। सारे जगत् के दुःख आप स्वयं सहते हैं और दूसरों को अमरता प्राप्त कराने के लिये स्वयं हालाहल विष का पान करते हैं। दूसरों के सुख के लिये सम्पत्ति और ऐश्वर्य का स्वयं त्याग करते हैं। अपनी अर्द्धांगिनी को उग्र तपश्चर्या में लगाते हैं, चिताभस्म और व्याघ्राम्बर को ही भूषण मानते हैं। इसलिये शिवजी को 'योगिराज' की संज्ञा दी जाती है।

रामकृष्ण परमहंस ने वैद्यनाथधाम तथा काशी की यात्रायें की थी। काशी में नाव पर सवार हो घाटों की शोभा देखते हुए उन्होंने जैसे ही मणिकर्णिकाघाट(श्मशान) का दर्शन किया, वे एका-एक समाधि में प्रविष्ट हो गये। जब वे स्वस्थ हुए तो उन्होंने बताया कि उस घाट पर मरे हुए व्यक्ति के दाहिने कान में भगवान् शिव को तारक-मन्त्र का उपदेश करते हुए देखकर आनंदातिरेक के कारण वे समाधि में पहुँच गये।

श्रीशिव-पार्वती तथा राधाकृष्ण में एक्यभाव है, इसे समझाने के लिये रामकृष्ण परमहंसजी शिष्यों को निम्नलिखिति पौराणिक कथा[1] सुनाया करते थे। किसी समय प्रदोषकाल में देवगण रजतगिरी कैलास पर नटराज शिव के ताण्डव में सम्मिलित हुए और पार्वतीजी अपनी अध्यक्षता में ताण्डव कराने को तैयार हुईं। ठीक उसी समय वहाँ नारदजी भी अपनी वीणा के साथ पहुँच गये और

---

1. यह कथा किस पुराण की है वर्तमान लेखक/संपादक को पता नहीं है। परन्तु इससे मिलती-जुलती कथा (जिसमें पार्वती ने कृष्ण के रूप में तथा शिव ने राधा के रूप में अवतार लिया था) महाभागवत (उप) पुराण (के अध्याय 49-54) में वर्णित है।

नृत्य में सम्मिलित हो गये। तदनन्तर शिवजी ताण्डव नृत्य करने लगे, सरस्वती वीणा, इन्द्र वंशी, ब्रह्मा ताली बजाने लगे और लक्ष्मीजी आगे-आगे गाने लगीं। विष्णुजी मृदंग बजाने लगे तथा बचे हुए देवगण, गन्धर्व तथा अप्सरायें आदि चारों ओर स्तुति में लीन हो गये। बड़े आनन्द के साथ ताण्डव सम्पन्न हुआ। उस समय पार्वती बहुत प्रसन्न हुईं और उन्होंने श्रीशिवजी से पूछा कि आप क्या चाहते हैं? आज बड़ा ही आंनद हुआ। फिर सब देवों से विशेषकर नारदजी से प्रेरित होकर उन्होंने यह वर माँगा कि 'हे देवि! इस आंनद को केवल हमींलोग लेते हैं, किंतु पृथ्वीतल में एक ही नहीं हजारों भक्त इस आनंद से तथा नृत्य-दर्शन से वंचित रहते हैं, अतएव मृत्युलोक में भी जिस प्रकार मनुष्य इस आनंद को प्राप्त करें ऐसा कीजिये, किन्तु मैं अपने ताण्डव को समाप्त करूँगा और 'लास्य' करूँगा।'[1]

इस बात को सुनकर पार्वती ने 'एवमस्तु' कहा और देवगणों से मनुष्य अवतार लेने को कहा और स्वयं श्यामसुन्दर का अवतार लेकर श्रीवृन्दावन धाम में आयीं और श्रीशिवजी ने राधाजी का अवतार लेकर ब्रज में जन्म लिया और 'देवदुर्लभ रासमण्डल' की आयोजना की और वही नटराज की उपाधि यहाँ श्यामसुन्दर को दी गयी।

(गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित कल्याण के, 'शिवांक' पर आधारित)

❁❁❁❁❁❁

जो जगत् के स्रष्टा एवं गुरु ब्रह्मा, देव-प्रवर शिव, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, गीता, तुलसी, गंगा, वेद, वेदमाता (सावित्री), व्रत, तप, पूजा, मन्त्र और मन्त्रदाता गुरु की निन्दा करते हैं, वे ब्रह्मा की आधी आयुतक अन्धकूप नामक नरक में पकते रहते हैं।

येनिन्दन्ति च ब्रह्माणं स्रष्टारं जगतां गुरुम्।।
शिवं सुराणां प्रवरं दुर्गां लक्ष्मीं सरस्वतीम्।
गीतां च तुलसीं गङ्गां वेदांश्च वेदमातरम्।।
व्रतं तपस्यां पूजां च मन्त्रं मन्त्रप्रदं गुरुम्।
ते पच्यन्तेऽन्धकूपे वै चाऽऽयुषोऽर्धं विधेरहो।।

(ब्रह्मवैवर्तपुराण श्रीकृष्णजन्मखण्ड-पूर्वार्ध 40/136-138)

1. पुरुषों के नृत्य को ताण्डव तथा स्त्रियों के नृत्य को लास्य कहा जाता है।